ओ३म् तत्सत् ॥

'पृथिवी पर परम पवित्र ईश्वरीय वैदिकधर्म्म के ही प्रचार से परम कल्याण होगा' 'यह अच्छे प्रकार निश्चय कर कतिपय वैदिकधर्म्म के सेवक अवैदिक मतों और वैदिकधर्म्म की बातें सर्वसाधारण के सन्मुख इस अभिप्राय से प्रकाशित कर देना चाहते हैं कि सब कोई सत्यासत्य के निर्णय पूर्वक असत्य का त्याग और सत्य का ग्रहण कर परम कल्याण भागी बनें और 'ज्ञान-ग्रहणाभ्यासस्तद्विद्यैश्च सह संवादः' इस न्याय सूत्र के अनुसार भ्रातृभाव से परस्पर सम्वाद के द्वारा भी स्थिर कर ज्ञान की ओर आवें और अज्ञान को त्यागें 'नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते' इसी शुभ इच्छा से प्रेरित हो यह अलौकिक-माला आपलोगों को समर्पित है। इस को देख भाल के पहिनें या त्यागें यह आप परीक्षकों की मङ्गल कामना पर निर्भर है।

इति।

रामतौल	अखिललोकशुभाभिलाषी—
१—३—१८१६।	शिवशङ्कर।

नोट—वर्तमान यूरोपिय महा युद्ध के कारण कागज तथा स्याही के मूल्य बढ़ जाने से इस पुस्तक का मूल्य भी बढ़ा दिया गया है।

प्रकाशक।

॥ ओ३म् ॥

अलौकिक माला

कलिमल ग्रसेउ धर्म सब, लुप्त भए सद्ग्रन्थ।
दंभिन निजमत कल्पि करि, प्रगट कीन्ह बहु पन्थ ॥
श्रुतिसम्मत हरिभक्ति पथ, संयुत ज्ञान विवेक ।
ते न चलहिं नर मोहवश, कल्पहिं पन्थ अनेक ॥
चलत कुपन्थ वेद मग छाँड़े, कपटकलेवर कलिमल भांड़े ॥
कल्प २ भरि इक २ नरका, परहिं जे दूषहिं श्रुति करि तरका ॥

इत्यादि वचनो से तुलसीदासजी वेदो की बहुत प्रशंसा और श्रुतिविरुद्ध कल्पित पन्थो की खूब निन्दा भी करते हैं। इसी प्रकार अपने देश के सब ही पन्थाई अपने २ पन्थ को वेदानुकूल कहकर गाते हैं परन्तु परीक्षा कर देखते हैं तो एक भी सम्प्रदाय वा पन्थ वेदानुकूल नहीं ठहरता। इसी देश का नहीं किन्तु सम्पूर्ण पृथिवी का उद्धार केवल वैदिक-धर्म के प्रचार से होगा इसमें अणुमात्र सन्देह नही। इस हेतु प्रथम मैं अपने देश वासियों से सविनय निवेदन करता हूं कि वेदविहित पथ पर चल के निज और पृथिवी का कल्याण करें। तुलसीदास जी वेदो की भरपेट स्तुति करते हुए भी सैकड़ो बाते-वेदविरुद्ध, प्रत्यक्षविरुद्ध, शास्त्रविरुद्ध, असङ्गत-उटपटांग लिखते हैं यह देख मुझे उनके विचार पर बड़ा शोक होता है। आप प्रेमी भक्तजन इनको अच्छे प्रकार विचार त्याग देवे अथवा इनकी सत्यता सिद्ध करे।

रामायण पढ़कर लोग महागप्पी बनेंगे, क्योंकि तुलसीदासजी कहते हैं कि एक कौआ सुमेरु पर्वतपर निवास कर सबप्रकारकी चिड़ियोंको प्रतिदिन रामायण सुनाया करता है। इसकी कथा सुनने को महादेवजी भी कभी २ जाया करते हैं। जब कभी गरुड़जी को महामोह उत्पन्न होता है जिसको नारद, ब्रह्मा, महादेव भी दूर नहीं कर सकते उसको यह कौआ अपने दर्शनमात्र से दूर करदेता है। इस पृथिवी पर रामायण भी इसी काग के द्वारा आया है। प्रथम शिव ने मन में रामायण रचा, रचकर तीनो लोक ढूंढ आए, न देव न दानव, न मनाव, न गन्धर्व, न यक्ष न राक्षस कोई जीव मानसरामायण सुनने का अधिकारी मिला। यदि कोई मिला तो एक यही कौआ। इसने महादेवजी से रामायण सिख बड़ी कृपाकर याज्ञवल्क्य मुनि को दिया। इन्होने ऋषि भरद्वाज से कहा। रामायण मे जितनी प्रशंसा, माहात्म्य, ज्ञान, विज्ञान भक्तिभाव, इस एक कौए के दिखालाए गए हैं उतने गुण शम्भु,ब्रह्मा,विष्णु, नरदादिकों के भी नही। स्वयं श्रीरामजी से बढ़कर तुलसीदासजी ने इस कौए की स्तुति की है। इसीसे आप पाठक समझ सकते हैं कि तुलसीदासजी का यह महागप्प है या नही? पूर्वजन्म का जीवन इस कौए का इस प्रकार है—अयोध्यावासी किसी शूद्र के घर मे इसका जन्म हुआ। महा दुर्भिक्ष होनेपर वहां से भागकर उज्जैन जा किसी एक विप्र का शिष्य बन उससे शिवमन्त्र पा शिव की आराधना करता रहा। एक दिन इसने अपने गुरु का निरादर

किया अतः महादेव के शाप से, सांप, व्याघ्र, आदि अनेक योनियों में भ्रमकर ब्राह्मण देह पाया। पुनः लोमश ऋषि के शाप से यह कौआ होगया। तबसे इसने इसी काकदेह को पसन्द किया इसी रूप से अब सर्वदा रामायण गाया करता है। अब मैं तुलसीदासजी के वाक्य लेकर इस पर कुछ विचार करता हूं।

१—"प्रभु कीन्ह यह चरित सुहावा। बहुरि कृपा कर उमहिं सुनावा। सोइ शिव कागभुशुण्डिहिं दीन्हा। राम भक्ति अधिकारी चीन्हा। तेहि सन याज्ञवल्क्य पुनि पावा। तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा" ॥ बालकाण्ड ॥ यह पहला महामोह या महागप्प है क्योंकि बाल्मीकि जी से पहले किसी ने रामायण नहीं बनाया। पहले के किसी ग्रन्थ में महादेव के रामायण बनाने और कागभुशुण्डी को सुनाने की वार्ता नहीं है। याज्ञवल्क्य वेद के एक बड़े ऋषि थे। क्या इन्हें कोई ऋषि, मुनि, गुरु न मिले जो इन्होंने एक कौए से रामायण की कथा सुनी और तब रामतत्त्व जाना। शतपथ ऐतरेय आदि अनेक अति प्राचीन ब्राह्मण ग्रन्थ हैं। शतपथ, में याज्ञवल्क्य की कथा विस्तार से आई है। किसी ग्रन्थ से ऐसा सम्वाद दिखला सकते हैं? देवों में महादेव तमोगुणी, पक्षियों में महाअधम चाण्डाल कौआ। यदि येही दो राम को अच्छे प्रकार जानते, किन्तु बड़े २ ऋषि, मुनि, आचार्य आदिक नहीं तो रामायण सर्वथा त्याज्य है। ऋषिसन्तान ऋषियों के पीछे चले, कौए और तमोगुणी के पीछे नहीं।

२-"इन्द्रजीत करि आपु बन्धावा। तब नारदमुनि गरुड़ पठावा॥ बन्धनकाटि गयउ उरगादा। उपजा हृदय प्रचण्ड विषादा।" इसके आगे लिखा है कि यह गरुड अपने भ्रम दूर करने को नारद के पास गया। इसको नारद ने ब्रह्मा के पास भेजा। ब्रह्मा ने शिव के निकट। शिवने भी कहा कि "नित हरि कथा होहि जहं भाई। पठवों तोहि सुनहु तहजाई," हेगरुड! आप काग जी के निकट जाइये वहां ही आप का भ्रम दूर होगा। काग के आश्रम के दर्शनमात्र से गरुड जी का सन्देह जाता रहा और वहां कुछ दिन निवास कर कौए से सम्पूर्ण रामायण सुना, इत्यादि कथा उत्तरकाण्ड में देखिये। रामायण प्रेमियो! क्या यह द्वितीय महागप्प नहीं? प्रथम तो पशु पक्षियों को न ऐसा कभी ज्ञान हुआ न होगा। यदि कौए और गरुड आदि पक्षी त्रेता में मनुष्य बोली बोला करते थे तो आज भी बोलते और आज मनुष्य के वाहन हाथी, घोड़े, ऊंट बैल गदहे आदि पशु हैं। वे अपनें २ स्वामीमें सन्देह कर किसी मनुष्य से पूछने को नही जाते। पक्षी भी बहुत से पालतू हैं उन्हे भी कभी ऐसा सन्देह नही होता। यदि कहो कि ये दिव्य पक्षी थे तो पुनः इन्हे सन्देह ही क्यो हुआ? क्या भगवान के निकट भी अज्ञानी जीव रहा करते हैं तब गरुड़ को सन्देह क्यों हुआ? प्रेमियों! भक्तो! तनिक विचारो तो किञ्चित सेवा से एक कौए को राम जी ने ऐसा दिव्य ज्ञान दिया है कि कल्प कल्पान्त मे भी इसको मोह प्राप्त नही होता और जो गरुड़ सदा रामजी की सेवा में

रहता है उसको दिव्यदृष्टि नहीं दी ? यह कैसा न्याय है ? अथवा रामजी जब अवतार लेने को चले तो अपने ऐसे प्रेमी भक्त वाहन से अपने जन्म के स्थान वगैरह कह नहीं आए अथवा गृह पर अपने स्वामी को बहुत दिनों तक न देख किसी से पूछ कर वा खोज कर गरुड़ अपने स्वामी का पता न लगाया होगा ? अथवा सन्देह होने पर जो इधर उधर मारा फिरता रहा स्वयं अपने स्वामी के निकट जाकर क्यों न पूछ लिया—आप मेरे स्वामी हैं या नहीं ? रामजी इसका सन्देह दूर कर देते । कहां तक वर्णन करूं, यह द्वितीय महा-मोह है । यह भी वार्ता वाल्मीकि में नहीं ।

३ "तब कछु काल मराल तनु, धरि तहं कीन्ह निवास" "वायस तनु रघुपति भगति, मोहि परम सन्देह" "वृन्दवृन्द विहंग तहं आए । सुने राम के चरित सुहाए" "कारण कवन देह यह पाई । तात सकल मोहि कहहु बुझाई" "सपदि होहि पक्षी चण्डाला "इहां वसत मोहि सुनु खगईसा । बीते कल्प सात अरु बीसा" इत्यादि वर्णन से आपको यह मालूम होगया कि शिवजी भी हंसरूप धार इस कौए से कथा सुना करते हैं और यह सचमुच कौआ ही है आदमी नहीं । तृतीय महामोह इस में यह है कि २७ कल्प बीत गए परन्तु यह पक्षी ज्यों का त्यों बना रहा ।

४—भक्तो ! कौआ, सूगा, मैना, तीतर, बटेर, बाज, गीध, चील्ह, कबूतर, मोर, हंस इत्यादि २ सब प्रकार के पक्षिगण

कागजी से रामायण सुना करते हैं । क्या इनमें से कोई अभीतक रामजी के भक्त बने या नहीं ? इन कौए और गीधों मे निरामिष कौन हैं ? क्या इन वैष्णव राम भक्त चिड़ियों की सोसाइटी, सभा, समिति मण्डल कहीं हिन्दुस्तान में वा अन्य देश में हैं या नहीं ? कागजी का एक भी चेला कण्ठी, तिलक, छापा, मुद्रा, लगाये हुए नहीं दीखता । क्या कारण ? ऐ भक्त जनो ! कुछ सोचो तो यदि भुशुण्ड कल्पान्त तक प्रतिदिन चिड़ियों को रामायण सुनाया करता तो आपके देश की कुछभी चिड़ियां तो वैष्णव बनी हुई दीखतीं । अतः यह महाभ्रम है । ऐ मूर्खते ! तू धन्य है ! हिन्दुस्तान में तेरे चेले २० बीस कोटियो से अधिक है । तेरा ही राज्य है । देवि ! मूर्खते ! नमस्ते ।

५—पुनः एक समय अयोध्या में आ राम के बालचरित्र देख यह कौआ परमलज्जित हो महाभ्रम में पड़ा । रामजी इसे पकड़ने को दौड़े । यह भाग चला । ब्रह्म-लोक, इन्द्रलोक, शिवलोक, ब्रह्माण्ड के सातों आवरणों को फोड़कर जहांतक उसकी गति थी वहांतक भागता चला गया किन्तु रामजी के भुजा ने इसका पीछा न छोड़ा । सिर्फ दो अंगुल का अन्तर रहता था, तब यह बहुत डर गया । नेत्र मूंद लिये । आंख मूंदते ही अयोध्या आ पहुंचा । रामजी हंसने लगे हँसते ही राम के मुख में चला गया । वहां करोड़ो ब्रह्मा महादेव, अनगिनित ताराएं सूर्य्य, चन्द्र, करोड़ो ब्रह्माण्ड देखे एक एक ब्रह्माण्ड में इसको सौ सौ वर्ष बीते । इतने में कई शतकल्प बीत गये । इस को विकल और दुःखित देख

पुनः रामजी को हसी आई और यह मुख से निकल पड़ा। अगने में राम के उसी रूप को देख इसे बड़ा अचंभा हुआ। यहां यह सारी लीला केवल दो घड़ी में ही हुई। इत्यादि उत्तरकाण्ड में देखो। तुलसीदासजी यहां दो प्रकार कीवातें कहते है "एक एक ब्रह्माण्ड मह, रहेंउ वर्ष शत एक"। "उभय घड़ी मह मैं सब देखा, भएउ भ्रमित मन मोह विशेखा" विचारशीलो! विचारिये तो पेटमें कई सहस्रवर्ष बीत गए और बाहर केवल दो घड़ी वीती? यह कैसे? इससे मालूम पड़ता है कि तुलसी जी "समय क्या वस्तु है" इस को नहीं जानते थे। यदि जानते तो ऐसी बात कभी न कहते। रामभक्तो! सर्वत्र समय समान ही बीता करता है। टुक भी तो ध्यान दो। ऐसे २ महा गप्पो के फैलाने से भारत के कौनसे कल्याण सोच रहे हो। एक कौए के इतने गप्प। धन्य गप्पाढेवि! धन्य! "या देवि! सर्वभूतेषु गप्पा रूपेण संस्थिता। नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं नमोनमः"

६—यह कौआ बड़ा रसिक है। यह राम के युवावस्था और वृद्धावस्थास्वरूप का ध्यान नहीं करता, किन्तु बालक राम ही इसके उपास्य देव हैं। "इष्टदेव मम बालक रामा बालकरूप राम कर ध्याना। इसमें भी कोई गूढ़ रहस्य होगा। तब ही तो रामप्रेमी कभी २ स्त्रीरूप बनकर नाचते हैं। भक्ति में ऐसे तन्मय होजाते है कि पुरुष होकर भी रामसखी कहलाते। स्त्रीवत् मासिकधर्म्म को भी निबाहते। हाय! भारतवासियो! तुम्हारी बुद्धि कहां गई! इसी का नाम

भक्ति है ? । ७—ऐसे ही गप्प इन्द्रपुत्र जयन्त, ८—और ऋषि दुर्वासा के लिखे हैं । जयन्त के पीछे २ रामबाण और दुर्वासा के पीछे २ सुदर्शन चक्र चला । बाण और चक्र दोनो तीनो लोक में घूम के फिर आये लेकिन गिरे कहीं नहीं । भक्तो भगवान् के ही ये नियम हैं कि फेंकेहुए जड़ पदार्थ इस प्रकार चल फिर नहीं सकते । फिर यदि राम ईश्वर था तो अपने बनाए हुए नियम को यह कैसे तोड़ता । एक साधारण पुरुष भी ऐसा नहीं करता । पुनः वहां ही दोनो को मूर्च्छित कर अपनी विभूति दिखला दण्ड दे देते । तीनो लोक में उनको घुमाने से राम-कृष्ण ने कौनसा प्रयोजन समझा । क्या देवगण इन के महत्त्व को नहीं जानते थे इसलिये ? इत्यादि अनेक विचार से ये भी दोनोमहागप्प ही सिद्ध होते । इसी प्रकार ९—तुलसीदासकृ० कि कुमुद नाम का वानर गेंद के समान चन्द्र को आकाश में उछाला करता था । १०—जन्मतेही हनुमान ने सूर्य्य को पकड़ लिया । ११—सूर्य्य से इसने विद्या सीखी थी । १२—इसकी गति उलट दी । १३—अगस्त्य ने समुद्र सोख लिए । १४—त्रिशंकु अभीतक आकाश में लटक रहा है । १५—ययाति इसी शरीर से स्वर्ग गया और पुनः वहां से गिरगया । १६—समुद्र में १०० योजन की मछली होती है १७—रावण ने कैलाशपर्वत को उठा लिया । १८—अपने दशो शिर काटकर शिव के ऊपर चढ़ा दिये । १९—मैनाक, हिमालय आदि पर्वत उड़ा करते थे । २०—पृथिवी, समुद्र, नदी वृक्ष आदि परस्पर, बातचीत करते हैं । इत्यादि हज़ारो

गप्प तुलसीदासजी लिखते है । कहिये इनके पढनेसे क्या लाभ और मुक्ति है ? इनसे वढ़कर भी संसार में कोई गप्प वना वा लिख सकता । अतः मै कहता हू कि इसके पढनेहारे महामहा गप्पी वनेंगे । महामहोपाध्याय वा महामहाऽऽचार्य्य वा महामहा भक्त नहीं ।

२१—तुलसीदासजी के रामायण मे भूत, प्रेत, डाकिनी, शाकिनी, मन्त्र, आदि के वर्णन पढ लोग महा कुसंस्कारी वनेंगे । २२—मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि में फंसकर घोर अघोरी २३—रुण्ड—मुण्डमालाधारिणी, मांस-शोणितभक्षिणी, योगिनी, कालिका, चामुण्डा आदि के चरित्र पढ़कर महाविरुद्धाचारी । २४—और छींक, स्वप्न, शकुन, अशकुन इत्यादि मान हृदय के महादुर्बल वनेंगे । २५—और महादेव के पूजक वनने से (रामभक्तो के लिये महादेव का भक्त वनना परम आवश्यक है) मै समझता हू कि खाद्याखाद्य से पृथक् भी नहीं रहसकते । राम स्वयं कहते हैं—"औरो एक गुप्रमत, सबहि कहौं कर जोरि । शंकर भजन विना नर, भक्ति न पावै मोर" शिवद्रोही रामभक्त कहावे । सो नर सपनेहु मोहि न भावे ॥ शंकर विमुख भक्ति चह मोरी । सो नर मूढ़ मन्दमति थोरी" ॥ इत्यादि प्रमाण से सिद्ध है कि वैष्णवो को शाक्त और शैव होना प्रथम परम आवश्यक है । पुन गौरी, पार्वती, कालिका, चामुण्डा, गणेश, शिवजी जव रघुकुल के और राम के इष्ट देव हैं तुलसीदास ऐसा कहते हैं तो शाक्त धर्म्म से ये रामसम्प्रदायी कैसे वच सकते हैं फिर इनका वैष्णवत्व कहां चला जायगा ? ।

शैवमत का ही भेद शाक्त है और चामुण्डा, कालिका, काली आदि देवियां महादेव की स्त्रियां हैं। ये मद्य, मांस, मनुष्यमांस तक ग्रहण करती हैं, तब क्या शिव के भक्त उनकी स्त्रियों को न भजैं और उनके प्रसाद को न लेवेंगे? यदि ऐसा न करें तो ये महादेव के पूर्ण भक्त कैसे।

२५—तु० क० "यथा सु अंजन आंजि दृग, साधक सिद्ध सुजान। कौतुक देखहिं शैल बन, भूतल भूरि निधान" ॥ "कलि विलोकि जगहित हर गिरिजा। शाबर मन्त्रजाल जिन सिरिजा। अनमिल आखर अर्थ न जापू। प्रगट प्रभाव महेश प्रतापू ॥" इत्यादि ॥ ऐ सत्यान्वेषी भक्तो! यह गप्प नहीं तो क्या?। यदि तुलसीदास के समय में भी यह अंजन होता तो वे लंका, समुद्र आदिकों के बारे में ऐसे २ गप्प न बनाते। यदि कलि के हित के लिये शाबर मन्त्र होता तो आज यहां कोई दुःखी न रहता। कम से कम रामायण के प्रेमियों को तो यह मन्त्र मिला होता। ऐ मनुष्य हितकारी जनो! आज इन ही कुसंस्कारों में फंसकर कोटियों नर, नारियां भ्रष्ट होरही हैं। इस रामायण का प्रचार कर क्यों आप जले हुए के ऊपर निमक डालते हो इससे क्या लाभ?। २६—तु० क० कि मेघनाद के कटे हुए हाथ ने सुलोचना को पत्री लिख के दी। २७—इसका अधर शिर हंसने लगा। २८—जो १२ वर्ष तक न पीवे और न खाय उसके हाथ से मेघनाद मरेगा। ये सब गप्प हैं। मुझे इनकी बुद्धि पर महाशोक होता है। "नींद नारि भोजन परि हरई

बारह बरस तासु कर मरई' यह वाक्य मनुष्य के बारे में या देवता के बारे में था ? । यदि द्वितीय पक्ष है तो देवता कभी खाते ही नहीं इतना कहते हुए आप को कब देरी लगेगी । फिर यह १२ वर्ष ही क्यो ? प्रथम पक्ष में मनुष्य की कोई ऐसी सृष्टि बतलानी चाहिये जो १२ वर्ष तक न खाती हो । अब विचारो तो यह धोखे की बात नहीं ? २६— इसी प्रकार ब्रह्मा ने और अन्यान्य देवों ने रावण को बहुत धोखे दिये और ब्रह्मा का लेख भी मिथ्या होगया । क्योंकि रावण ने "मनुष्य, वानर जाति में ब्रह्मा ने मेरे मारने योग्य सामर्थ्य ही नहीं रक्खा है और अपने नियम से विरुद्धाचारी ब्रह्मा न होगा" इत्यादि विचारकर "हम काहूके मरहि न मारे । बानर मनुज जाति दुइ बारे' वानर और मनुष्य को छोड़ अन्य किसी से मेरा मृत्यु न हो ऐसा वर मांगा था । इस अवस्था में यह बड़ा धोखा देना नहीं है कि साक्षात् परमात्मा नर होकर इसको मारता है । टुक विचारिये तो इस वर मांगने से रावण का क्या भाव था और ब्रह्मादिकों ने क्या लीला रची ? । पुनः राम का जन्म लेना केवल नटवत् लीला थी ।
"यथा अनेकन वेष धरि, नृत्य करै नट कोई ।
जोई २ भाव दिखावै आपु न होई सोई"
"अस रघुपति की लीला उरगारी" इसके अनुसार भी रावण का मृत्यु मनुष्य के हाथ से कैसे हुआ । विचारशील पुरुषो ! इससे सिद्ध है कि राम मनुष्य थे ईश्वर नहीं । तबही "नर के हाथ से रावण मरेगा" यह ब्रह्मा का लेख सत्य होसकता है । ३०—ऐसे ही धोखे से मधुकैटभ मारा गया ।

हिरण्याक्ष भ्राता सहित. मधु कैटभ बलवान, ।
जो मारे सो अवतरे, कृपासिन्धु भगवान ।

जलमय सृष्टि देख मधु ने विष्णु से कहा कि जहां पृथिवी हो वहां मुझे मारो. विष्णु ने अपने जांघ पर रखकर उसे मार-डाला और कहा कि यह भी तो पृथिवी है । क्या मधु का पृथिवी से यही अभिप्राय था ? । ३१—इसी प्रकार हिरण्याक्ष नमुचि. वृत्र आदिकों की कथा है । मैं पूछता हूं कि ऐसे रामायण के पढ़ने से मनुष्य धोखेबाज और दूसरों के सर्वस्व नाश कर स्वार्थसाधक न बनेंगे ? इस कारण ये सारी कथाएं मिथ्या और किन्हीं अल्पज्ञ पुरुषों की बनाई हुई हैं । परस्पर सहस्रों विरोधों से भरी हुई हैं । प्रिय भ्राताओ ! इन्हें त्याग वेदों की शरण में आओ ॥

छल कपट के किये विना परमात्मा और देवों का एक काम भी सिद्ध नहीं हुआ है । इस कारण ऐसे जीवन चरित्र के पढ़नेहारे भी वैसे ही होंगे अत: रामायण आदिकों को धर्मपुस्तक मान कर कभी पढ़ना उचित नहीं । क्योंकि सृष्टि के आदि में मधु को मारने के लिये मधुसूदन को और हिरण्याक्ष को मारने के लिये नृसिंह को छल करना पड़ा । ३२—बलि को छलना सर्वत्र प्रसिद्ध है । ३३—मोहिनी रूप से असुरों को धोखा दिया है यह आप जानते ही हैं । ३४—

"परम सती असुराधिप नारी । तेहि बल ताहि न जीत पुरारी ॥ छलकर टारेहु तासु व्रत, प्रभु सुर कारज कीन्ह" जलन्धर की स्त्री वृन्दा के साथ केवल छलही नहीं किन्तु घोर अत्याचार किया गया । ३५—ऐसेही

शंखचूर की स्त्री तुलसी बिचारी ठगी गई। "सहज अपा-
वनि नारि, पति सेवत शुभगति लहहिं। यश
गावत श्रुति चारि, अजहु तुलसिका हरिप्रिया"
धर्मपिपासुजनो! तनिक विचारो तो तुलसीजी ने अनुसूया के
मुख से अस्थान में कैसी गन्दी और पातिव्रत के नाश करने-
हारी बात सीताजी को सुनाई। शंखचूर की स्त्री तुलसी थी।
इसके पातिव्रत के प्रताप से शंखचूर नहीं मरता था। हरि ने
इसके सतीत्व को नष्ट कर देवों को जितवाया। इसने विष्णु
को शाप दिया कि तू पाषाण होजाय। इसपर विष्णु ने कहा
कि तेरा शरीर गण्डकी नदी और तेरे केश तुलसीवृक्ष होवें।
मैं पाषाण अर्थात् शालग्राम रूप से गण्डकी में निवास करूंगा
और तुलसीपत्रों से मेरी पूजा होगी। जन्मान्तर में भी तुझे
मैं न छोड़ूंगा इत्यादि। कहिये ऐसी २ कथा से रामायण प्रेमी
कौनसी शिक्षा ग्रहण करेंगे।

छोटे २ बच्चों, स्कूलों के विद्यार्थियों और सत्यान्वेषी
जनों को यह रामायण कदापि पढना पढाना उचित नहीं
क्योंकि इसमें सारी अविद्या की बातें भरी हुई हैं। भूत,
प्रेत, मन्त्र, यन्त्र, छींक, शकुन, अशकुन, इत्यादि २ शतशः
मिथ्या और असत्-वर्णन के सिवाय अज्ञान-भ्रम की सैकड़ों
बातें है। ३६—चन्द्र को एक असुर राहु ग्रसता है। ३७—यह
समुद्र से उत्पन्न हुआ है। ३८—यह शीतल है। ३९—इस से
सुधा=अमृत स्रवता है। ४०—पृथिवी की छाया से यह श्याम
है। ४१—हरिण इसके गोद में है। ४२—घटता और

बढ़ता है इत्यादि २ सब अविद्या की बातें हैं। ऐ भक्त जनो! ज्योतिःशास्त्र देखो। पृथिवी की छाया से ग्रहण होता है न कि राहु के ग्रसने से, यदि चेतन राहु ग्रसता तो इसके लिये नियत योग, पूर्णिमा तिथि आदि की ही क्या आवश्यकता थी। पुनः ज्योतिःशास्त्र गणित से कैसे ग्रहण बतला सकता इत्यादि। "सूर्य्याचन्द्रमसौ धाता, यथा पूर्वमकल्पयत्" इससे सिद्ध है कि सृष्टि के साथ २ इसकी भी उत्पत्ति हुई। क्या समुद्र मथन के पूर्व शुक्लपक्ष नहीं था? कुछ विचारो तो चन्द्र शीतल है इसको किसी प्रमाण से आप सिद्ध कर सकते हैं? यदि ऐसा होता तो ग्रीष्मऋतु में चाँदनी रात शीतल और अँधेरी गरम मालूम होती। यदि इससे अमृत स्रवता तो कोई प्राणी मरते नहीं। चन्द्रमा में हरिण रहता और घटता बढ़ता यह अज्ञानी बच्चों की बात है। अतः पुराणों और तु० दा० जी की चन्द्र सम्बन्धी सारी बातें वेद और प्रत्यक्ष विरुद्ध हैं। अतः त्याग के योग्य है। प्रमाण—"जन्म-सिन्धु पुनिबन्धुविष, घटै बढ़ै विरहिनि दुख दाई। ग्रसै राहु निज सन्धिहि पाई"। (बाल) शशिमह प्रगट भूमि की झाई (लंका) पूरण राम सुप्रेम पियूषा। कीरतिविधु तुम कीन्ह अनूपा। जहं वस राम प्रेम मृगरूपा। (अयोध्या) शशिशत कोटि सुशीतल। (उत्तर) पुनः तु० दा० क० ४३—इस पृथिवी को नीचे से सांप, कछुवा और सूअर वगैरह पकड़े हुए हैं। ४४—ऊपर से दिग्गज अर्थात् दिशाओं में स्थित हाथी चांपे हुए हैं। ४५—सूर्य के रथ में घोड़े लगे हुए हैं

४६—हंस मिश्रित पानी से दूध पी लेते हैं इत्यादि २० बातें भी अविद्या की हैं। रामभक्त होने पर भी बेचारे तुलसीदास-जी को सूर्य, चन्द्र, पृथिवी, समुद्र, नदी, पर्वत, आदि की विद्याएं किञ्चित् मालूम नहीं थी। भक्तो! देखो! यदि पृथिवी को पकड़े हुए शरीरधारी सांप हैं तो इनके पकड़नेहारे भी कोई चाहिये। यदि कहो कि इनको कछुए ने पकड़ रक्खा है। तो पुन. इस को पकड़नेहारा भी अन्य कोई चाहिये। इस प्रकार अनवस्थादोष आवेगा। अन्त में किसी को स्व-शक्तिस्थित मानना पड़ेगा। तब पृथिवी को ही ऐसी क्यों न मान लेते? सत्यान्वेषी पुरुषो! वेदों में यह बात आती है और आजकल स्कूल के छोटे बच्चे तक जानते हैं कि पृथिवी बड़े वेग से घूमा करती है। न सूर्य्य का कोई रथ और न उसमें कोई घोड़े हैं। देश में कोई भी एक रामायण प्रेमी है? जो हंस का मिश्रित दूधपानी से दूध को पृथक् करदेने का गुण प्रगट कर तुलसीदास की बात की सत्यता सिद्ध करे। अतः ऐ प्यारे भ्राताओ! इन गप्पो को त्याग वेद की शरण में आओ। प्रमाण—"दिशि कुञ्जरहु कमठ अहि कोला। धरहु धरनि धरि धीर न डोला" "भरि भुवन घोरकठोर रव रवि बाजि तजि मारग चले"। सन्त हंस गुण गहहि पय, परिहरि वारि विकार। (बाल) पुनः तु० दा० कहते है कि ४७—विष्णु के पैर से गंगा, ४८—सूर्य से यमुना इत्यादि नदियां निकलती हैं। ४९—हिमालय, विन्ध्याचल आदि पर्वतो को भी मनुष्यवत विवाह, सन्तान आदि हुआ करते थे।।

इत्यादि गप्प पढ़कर बच्चे उलटे हँसेंगे । आज भी गंगा हिमालय आदिक हैं वे क्यों न बोलते और सन्तानोत्पत्ति करते । क्या ये सब अब वृद्ध होगए ? तौ भी तो बोलना चलना था । रामचन्द्रजी तीन दिन तक समुद्र से रास्ता मांगते रहे इसको पढ बच्चे भी नदियों से रास्ता मांगने के हेतु कहीं तपस्या न करने लग जायं और विष्णु, शिव, इन्द्र, अगस्त्य की उत्पत्ति आदि की कथाओं के पढने से शुद्धाचारी न होंगे । अतः रामायण बच्चों के लिये महाविष है ।

ब्राह्मणों को भी रामायण पढ़ना उचित नहीं ।

क्योंकि इसमें समस्त वेद विरुद्ध बातें है । ५०—भगवान् का अवतार । ५१—मूर्त्ति पूजा । ५२—मृतक के नाम पर पिण्ड देना । ५३—जन्म से जाति पांति मानना । ५४ कलियुग में यज्ञ जप, तप, पूजा, पाठ आदि, न करके केवल नाम ही जपना इत्यादि शतशः बाते वेद विरुद्ध है । ५५—इसमें लिङ्ग पूजा तो अत्यन्त घृणित है । प्रमाण—चहु युग चहु श्रुति नाम प्रभाऊ । कलि विशेष नहि आन उपाऊ । कठिन काल मल कोष, धर्म न ज्ञान न योग तप, परिहर सकल भरोस, राम भजहि ते चतुर नर । कलियुग योग यज्ञ नहिं ज्ञाना । एक अधार राम गुण गाना । इसी प्रकार—क्षत्रियो और वैश्यो के योग्यभी रामायण नहीं । क्योंकि वीरता और पुरुषार्थ का कोई चिन्ह इसमे नहीं । राम की वीरता और पुरुषार्थ की बात,

मनुष्यों के हृदय में कोई प्रभाव नहीं डाल सकती क्योंकि ये साक्षात् परमात्मा माने गये हैं। उनके लिये समुद्र को बांधना, रावण को मारना, या सम्पूर्ण पृथिवी को ही उठा लेना या चूर्ण २ कर देना इत्यादि कौनसी बात है। उनके लिये ये सब वर्णन महातुच्छ हैं ॥

कदापि भी स्त्रीजनों को रामायण पढ़ना उचित नहीं—इनके ऊपर व्यर्थ आक्षेप और असत् लांछन लगाये गये हैं। इसके पढ़ने से स्त्रियां शुद्धाचारिणी न होंगी; उच्चभाव न आवेंगे, धर्म नाम पर ठगी जायेंगी। छल कपट की मूर्त्तियां बन जायेंगी। एक तो बहुत दिनों से यहां स्त्रियां अपवित्रा, गुड़ियां, खिलौने; जूतियां, मूर्खा, कुसंस्कृता बनाई गई हैं और बनाई जारही हैं। यदि इसको पढ़ेंगी तो यथार्थ रूप से अवगुण की खान, मिथ्या के महासागर, भूत, प्रेत, डाकिनी, शाकिनी, मन्त्र, यन्त्र इत्यादि २ के मानने-हारी बनकर गृहाश्रम को अशोभित और नरक बनावेंगी। मैं क्या कहूं बेचारे तुलसीदास जी ने स्वयं कुछ न विचारा, उस समय का जैसा प्रवाह था उस में येभी डूबकर बहने लगे।

नारि स्वभाव सत्य कवि कहहीं। अवगुण आठ सदा उर रहहीं। साहस अनृत चपलता माया। भय अविवेक अशौच अदाया॥ (लंका) तुलसीदास की यह उलटी बात है पुरुषो के दोष स्त्रियों के शिर मढ़े। निजपुत्री के साथ सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा ने, मुनियो की सहस्रों स्त्रियों के साथ भवानीपति शिवजी ने, वृन्दा, तुलसी आदिको के साथ विष्णुजी ने, षोडश सहस्र अबलाओं और परस्त्री राधा के

साथ श्रीकृष्णचन्द्र ने कैसी अनुचित चपलता प्रकट की है। कहिये रामप्रेमियो! ये सब पुरुष हैं या स्त्रीजन। पुनः धीवरपुत्री प्रेमी पराशर, अप्सरालुब्ध विश्वामित्र, मुनिपत्नी-दूषक इन्द्र, गुरुपत्नीतल्पगामी चन्द्रमा इत्यादि २ सहस्रों पुरुष थे वा स्त्रियां सहज अपावनि नारि (अरण्य) विधि हु न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अघ अवगुण खानी। (अयो०) जिमि स्वतन्त्र होइ बिगरहि नारी (किष्कि०) राखिय नारि यदपि उर मांहीं। युवती शास्त्र नृपति वश नाहीं (अर०) सत्य कहहिं कवि नारि स्वभाऊ। सब विधि अगम अगाध दुराऊ। निज प्रतिबिम्ब मुकुर गहि जाई। जानि न जाइ नारि गति भाई। का नहिं पावक जारिसक, का न समुद्र समाइ। का न करै अबला प्रबल, केहि जग काल न खाइ। (अयोध्या) अब मैं पूछता हूं—यदि ब्रह्मा नारियो के हृदय के भाव नहीं जानते तो वह सृष्टिकर्त्ता कैसे। एक साधारण घड़ीसाज अपनी घड़ी को यथावत् जानता पर सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा को निज रचित जीव मालूम नहीं होता। क्या पुरुष स्वतन्त्र होकर नष्ट नहीं होते पराशर आदिक इस में प्रमाण है। यदि स्त्री अवगुण खानि और अपवित्र है तो क्या माता से आये हुए गुण पुरुषो को दूषित न करेंगे? और रामायण में वृन्दा और विष्णु, तुलसी और विष्णु इत्यादि देव, मुनि, ऋषि और राजाओं की कथा पढ़ कर स्त्रियां कौनसी

उत्तम शिक्षा ग्रहण करेंगी। प्रथम सीताजी की उत्पत्ति का ही ठीक पता नहीं। दूसरी साक्षात् परमेश्वरी की बराबरी आचरण में कौन नारी कर सकेगी। तीसरी, एक गमार के कहने से केवल अपनी प्रतिष्ठा के लिये अथवा कलंक के भय से राम ने सीता का त्याग कर दिया। कैसा स्त्रियों के ऊपर अन्याय है? इसी कारण तो बात २ में पुरुष स्त्रियों को पीटते, गंजन करते, निकालते रहते हैं। तारा और मन्दोदरी के पुत्र, पौत्र, नाती, दौहित्री आदिक रहते हुए भी पुन अपने देवर सुग्रीव और विभीषण के साथ ग्राम्यव्यवहार करना इत्यादि उदाहरणों से स्त्रियों के मन पर क्या प्रभाव पड़ेगा। मैं कहांतक उदाहरण लिखूं। स्त्रियों के लिये रामायण हलाहल विष है। सीताजी के समान लक्ष्मण जी की सहधर्मिणी ऊर्मिलाजी पति सेवार्थ वन को क्यों न गई?

रामायण के प्रचार से वेदमार्ग, शास्त्र की आज्ञा, यज्ञ, जप, तप, सकल सदाचार और सब शुभकर्म नष्ट होजायँगे देखिये, ५६—तुलसीदास जी वेद और काल विरुद्ध बातें लिखते हैं कि राम के कुल देवता और राम के परम उपास्य देव गणपति, गौरी और शिव जी थे। ५७—राम जी पार्थिव अर्थात् मिट्टी का शिवलिङ्ग पूजते थे। ५८—समुद्र सेतु के ऊपर लिंग स्थापना की इत्यादि। गणपति गौरि गिरीश मनाई। चले अशीस पाइ रघुराई॥ राम-लखन सिय यान चढ़ि, प्रभु चरण शिरनाइ।

तब मज्जन करि रघुकुल नाथा । पूजि पारथिव नायउ माथा ॥ लिङ्ग थापि विधिवत् करि पूजा इत्यादि। भक्तजनो! यदि रामजी शिवकी पूजा और लिङ्ग स्थापना करते और उनके कुल देवता ये होते तो वाल्मीकि रामायण में कहीं भी इसकी चर्चा आती। अतः यह असत्य है। और भी लिङ्ग वा मूर्ति पूजा कलियुग से चली है। सत्य, त्रेता और द्वापर में इसकी कहीं भी चर्चा नहीं थी। यह भी विचारिये कि पार्वती जी से गणपति की उत्पति हुई है शनि की दृष्टि से गणेश का शिर गिरा तब विष्णु ने कहीं से हाथी का शिर ला के जोड़ दिया ऐसा पुराण कहते हैं। अब विचारिये कि पार्वती जी से पहिले सती जी थी। फिर इन के समय में गणेशजी कहां थे ? पुनः जब एक समय महादेव ने मुनियों की सैकड़ों स्त्रियों को दूषित किया है। तब मुनियों के शाप से शिवलिङ्ग पृथिवी पर गिरा तबही से इसका भी पूजन चला। ऐ भारत कुलभूषण जनो! तुक विचारिये तो लिङ्ग पूजा के समान जगत में कोई भी घृणित और अश्लील पूजा है? लिङ्ग और योनि की पूजा चलाकर यह देश महा अपवित्र और कलंकित होचुका है। मैं तो कहता हूं किन्हीं अज्ञानियों ने ऐसी पूजा चलाई। रामजी ऐसी घृणित पूजा क्यों करेंगे। मैं यहां विश्वासी जनो से पूछता हूं जिस शिव ने मुनियों की सहस्रों स्त्रियों को दूषित किया क्या वह पूजित होसकते? इसीलिये मैं कहता हूं ये सब वेद विरुद्ध और असत्य बातें हैं त्याग कीजिये ॥

भागवत में भी लिखा है कि जो कोई शिव की उपासना करेंगे वे पाखण्डी और सत् शास्त्र रहित होंगे, यथा "भवव्रतधरा ये च ये च तान् समनुव्रताः। पाखण्डिनस्ते भवन्तु सच्छास्त्रपरिपन्थिनः" क्या भृगु के इस शाप को रामचन्द्र भूल गये थे? तब शिवलिङ्ग कैसे स्थापित करते। पुनः शिवजी शूद्रों के देवता हैं। इसी कारण शिव-मन्दिर सदा खुला हुआ और उस में सब का प्रवेश होता है। अभी तक देश में व्यवहार चला आता है कि जो ब्राह्मण शिव-लिङ्ग पर चढ़े हुए प्रसाद खाता है वह महा अपवित्र और इसका पानी नहीं चलता इस कारण भी ये शूद्रों के देवता हैं। पुनः श्मशान में रहना, चिता का भस्म लगाना, मुण्डमाल पहिनना गले मे सांप लटकाना, भूत, प्रेत, डाकिनी, शाकिनी इत्यादि को साथ रखना, मांस-शोणित भक्षिणी, काली, चण्डिका, चामुण्डा आदि जिन की स्त्रियां हैं इत्यादि २ महादेव के सब आचरण दिखला रहे हैं कि ये शूद्रों के देव हैं। ऐसे देवों के पूजकों के सदाचार कभी शुद्ध नहीं रह सकते। अतः क्षत्रियकुल-भूषण रघुवंशियों और राम के, यह कभी पूज्य नहीं होसकते और न कभी थे। वेदों, वेदों की शाखाओं और त्रेता युग के ग्रन्थों में शिव की पूजा, लिङ्ग की स्थापना आदि का कहीं भी वर्णन नहीं है। ऐ भारत कुलभूषण जनो! निज देश को शुद्ध कीजिये। ऐसी घृणित पूजा को सर्वथा नष्ट करदें। तुलसीदास ने अपने समय की बातें लिखी हैं वेदों और शास्त्रों या वाल्मीकि की भी नहीं। अतः पदे २ इनकी भूलें हैं। ५९—विवाह में गाली बकना। ६०—आरती करनी।

६१—तुलसी की माला पहिनना। ६२—शिर पर गोरोचन वा तिलक लगाना। ६३—रामेश्वर महादेव के ऊपर गङ्गा जल चढ़ा कर मुक्ति लाभ करना "जो गङ्गा जल आनि चढ़ावहिं। सो सायुज्य मुक्ति नर पावहिं" ६४—काशी में राम मन्त्र देकर सब को तारना इत्यादि वेद विरुद्ध ही नहीं किन्तु बहुत नवीन बातें हैं। तुलसीजी का कथन है कि अहल्या पत्थर होगई थी, राम के पैर छूकर पुनः मानुषी हुई यह सर्वथा मिथ्या और उलटी बात है। वह पत्थर नहीं थी और रामजी ने ही अहल्या के चरण छूकर प्रणाम् किया है अहल्या ने राम के चरण का स्पर्श नहीं किया, देखो "वातभक्षा निराहारा तप्यन्ती भस्मशायिनी" "राघवौ तु तदा तस्याः पादौ जगृहतुर्मुदा"। वाल्मीकि के पीछे ही सब रामायण बने हैं। मन मानी बहुत बातें पीछे गढ़ली गई। अतः ये सब त्याज्य है। तुलसीदास जी कहते हैं गङ्गा, यमुना, सरस्वती आदि नदियां, हिमालय, विन्ध्याचल, चित्रकूट, प्रभृति पहाड़ सब सचेतन हैं परस्पर बात चीत किया करते हैं। ६५—प्रणाम करती हुई सीता को गङ्गा जी आशीर्वाद देती हैं यथा—प्राणनाथ देवर सहित, कुशल कोशला आइ। पूरहि सब मन कामना, सुयश रहहि जग छाइ। फिर लंका से लौटती हुई सीता ने गङ्गा का चरण पूजन किया और बदले में गंगाजी ने आशीर्वाद दिया जैसे "तब सीता पूजी सुरसरी। बहु प्रकार पुनि चरणन्हि परी"। ६६—जब रामजी ने चित्रकूट पर वास किया है तब सब पर्वत मिलकर इनको बहुत धन्यवाद दिया है

जैसे "शैल हिमाचल आदिक जेते । चित्र कूट यश गावहिं ते ते ॥ विन्ध्य मुदित मन सुख न समाई । बिनु श्रम विपुल बड़ाई पाई" ॥

६७—पुनः जब हनुमान् लंका को चला है तब समुद्र के वचन से मैनाक नाम पर्वत जल के भीतर से उठ, प्रणाम कर बोला कि आप कुछ देर विश्राम कर लीजिये । हनुमान् उसे स्पर्श कर चल दिया । सिन्धु वचन सुनि कान, तुरत उठेउ मैनाक तब । ६८—जब रामजी सेना लेकर समुद्र तट पर आए तो तीन दिन तक समुद्र की विनती करते रहे कि यह मेरी सेना को पार उतरने के लिये मार्ग देदेवे । परन्तु समुद्र ने इनकी प्रार्थना न सुनी पश्चात् क्रोध कर उसे सोखने के हेतु राम ने धनुषबाण लिया "कनकथार भरि मणि-गण नाना । विप्ररूप आएउ तजि माना" तब ब्राह्मण रूप धर थार में बहुत से मणि रत्न निकट आ बोला कि स्वामिन् ! आपकी ही मर्यादा बांधी हुई है । सो जो आप की आज्ञा हो सो मैं करूं । ६९—आप के ही कटक में जो नल, नील हैं उन के छूए हुए पर्वत पानी पर तैरते हैं इनकी सहायता से पुल बांध, पार उतर जायं इत्यादि । प्रिय भक्तजनो ! सोचिये तो यदि कृतयुग और त्रेता में नदियां और पर्वत बोला करते तो अवश्य आज भी बोलते । परन्तु बोलते नहीं । अतः यह ये मिथ्या बातें हैं । इन्हें त्यागिये तब ही कल्याण होगा । आज कल 'एक' बालक भी समुद्र से रास्ता मांगने के हेतु प्रार्थना न करेगा फिर राम-

चन्द्र ऐसे बुद्धिमान् हो के ऐसी अज्ञानता की बातें क्यों कर करेंगे । अतः यह भी महा गप्प ही है । ७०—पहाड़ किसी के आशीर्वाद से कभी तैर नहीं सकते । हां संभव यह है कि नल, नील कोई चतुर शिल्पी होंगे, उन्हों ने विद्याबल से सेतु बांधा होगा ॥ योरोपनिवासी आज बड़े बड़े कार्य्य विद्याबल से करते करवाते हैं अतः यह भी असत्य ही हैं । तीन दिन तक जो राम जी समुद्र से प्रार्थना करते रहे सो क्या ये स्वयं न जानते थे कि यह जड़ मेरी बात न सुनेगा और किसी ने नल नील की बात न सुनाई थी । ७१—"द्रुहि अर मम उत्तर तट वासी । हतहु नाथ नरखल अघराशी" समुद्र के वचन से राम ने निरपराध उत्तर तटवासी जनो को हनन किया । परन्तु उसी शर से अपराधी रावण को क्यो न मारा ? धर्म्म पिपासु जनो ! यह भी महा गप्प है क्योंकि आज कल एक साधारणन्यायी पुरुष भी अपराधी के अपराध को देख भाल कर दण्ड देता है और दण्ड भी वैसा दिया जाता है कि वह सुधर कर पुनः वैसा अपराध न करे । परन्तु परमन्यायी राम ने ये सब कुछ न देख उन्हें मार दिया । यह कैसा न्याय ? यदि कहो कि वह सब कुछ जानते थे तो जानकी की खोज क्यों करवाई और तीन दिन समुद्र से प्रार्थना क्यो करते रहे ? कहीं ईश्वरत्व और कहीं लौकिकत्व दोनों कैसे ? और सर्व सामर्थी थे तो लंका जाने की ही कौनसी आवश्यकता थी । अतः नर रूप धर नर समान ही लीला भी

कानी थी। पुनः रामचन्द्र ने ऐसा अन्याय क्यों किया अतः यह भी गप्प ही है।

७२—"तुम पावक महं करहु निवासा"

सीता हरण के पहले राम ने सीताजी से कहा कि जब तक मैं राक्षसों को निपात करूंगा तब तक आप अग्नि में निवास करें, यह सुन निजप्रतिबिम्ब रख सीता अग्नि में पैठगई, इसी सीता का हरण हुआ है अब मैं पूछता हूं कि रामजी ने किस भय के विवश होके ऐसा काम किया ? यदि सची सीता लंका जाती तो क्या क्षति थी ? जगदम्बा के दर्शन मात्र से अघ॥ सीताजी के किसी चेष्टा-विशेष से रावण को जगदम्बा प्रतीत होजाती क्योंकि स्वयं उसने कहा है कि

सुर रञ्जन भञ्जन महिभारा। जो जगदीश लीन्ह अवतारा। तौ मैं जाय बैर हठ करि हौं। प्रभु शर मरि भवसागर तरि हौं मैं बैर भाव से तरूंगा यह मेरा शरीर तमोगुणी है। फिर युद्ध क्षेत्र में भी माता समझ ही कर सीताजी को हृदय मे रख लिया था इसी कारण रण में रावण नहीं मरता था पुनः रावण को श्राप था कि वह बिना उसकी प्रसन्नता से किसी अबला के ऊपर बलात्कार नहीं कर सकता था। तब कौनसा भय था कि यह कार्य किया गया। अथवा अग्नि प्रवेश से भी आशय सिद्ध नहीं होता क्योंकि सीताजी दूसरी सीता बनाकर रख गई। जो जगदम्बा सम्पूर्ण सृष्टि रचती है क्या उसकी रचित सीता सची सीता नहीं ? यदि कहोकि यह केवल छाया थी तो इसको पकड़ना, केशाकर्षण करना, भूषण गिरादेना आदि कि-

यार्थ कैसे हो सकती ? यदि कहो कि यह सब राम की माया है। तो आप क्या माया नहीं ? फिर रामायण पढ़ने से ही क्या लाभ ? । ७३—लक्ष्मणहु यह मर्म न जाना जो कछु चरित रचा भगवाना (अरण्य) "तेहि कौतुक कर मर्म न काहू। जाना अनुज न मातु पिताहू"। (उत्तर) जब एक ही भगवान चार भागों में तुल्यरूप से बांटा हुआ था, तब लक्ष्मण आदिको को यह चरित मालूम क्यों नहीं ? अतः यह भी वैसाही गप्प हैं और ये दोनो कथाएं भी वाल्मीकि में नहीं।

७४—रामायण पढ़ने हारे सर्वदा भ्रम में रहेंगे। इस में कोई एक निश्चित सिद्धान्त नहीं। ब्रह्मज्ञान का तो गन्ध भी नहीं किन्तु अनन्य भक्ति का भी लेश नहीं। "राम को छोड़ दूसरे को जो भजता है वह मतिमन्द, मूढ़ है, एक बार भी राम कहने से भवसागर पार हो जाता है, जमुहाई में भी यदि राम पद मुख से निकले तो इसके निकट पाप नहीं आता। वाल्मीकि उलटा जपसे सिद्ध हुआ" इत्यादि वर्णन अनेक स्थान में यद्यपि तुलसीजी करते है। तथापि उदाहरणों से सिद्ध करते हैं कि सब देव, देवी, नदी, नाला, तुलसी, पीपर, भूत, परेत, पार्थिव लिंग तक की पूजा ध्यान करना उचित है। प्रथम स्वयं तुलसीदास महाराज राम के पक्के भक्त और विश्वासी नहीं थे। क्योंकि गणेश, दुर्गा, महादेव, सरस्वती आदि की स्तुति करते हैं और जब स्वयं रामजी शिव के चरणो का ध्यान लगाते। गंगा, यमुना, स-

रस्वती, माधव, समुद्र आदि को बड़े प्रेम से प्रणाम, पूजन, ध्यान, पार्थिव पूजन और शिव लिङ्ग स्थापन करते हैं सीताजी भी तदनुकूल आचरण करती है। तब क्या रामभक्त शिव आदिक देवों की उपासना से वञ्चित रहेंगे? फिर अनन्य-भक्ति कहां रही? जब आप महादेव का पूजन करेंगे तब अपने निकृष्ट, गदहा, सूअर, कूकर, सियार और मिथ्या भूत, प्रेत, डाकिनी आदि की पूजा से भी कैसे बच सकते हैं क्योंकि महादेव के ये सब ही वाहन हैं और साङ्ग सायुध, सवाहन सपरिवार पूजन की विधि है, यथा—

नाना वाहन नाना वेषा। बिहंसे शिव समाज निज देषा॥ कोउ मुखहीन विपुल मुख काहू। बिनु पद कर कोउ बहु पद बाहू॥ विपुल नयन कोउ नयन विहीना। हृष्ट पुष्ट कोउ अतितनु खीना॥ तनु क्षीन कोउ अतिपीन पावन कोउ अपावन तनु धरे। भूषण कराल कपाल कर सब सद्य शोणित तनु भरे। खरश्वान सुअर शृगाल मुषगण वेष अगणित को गनै। बहु जिनिस प्रेत पिशाच योगिनि भाति वरणत नहिं बनै।

इत्यादि। कहिये रामप्रेमियो! यदि साङ्ग, सायुध, सवाहन, सपरिवार महादेव को न पूजेंगे तो आप की क्या गति होगी?

शंकर विमुख भक्तिचह मोरी। सो नर मूढ़ मन्द मति थोरी॥ शंकर प्रिय मम द्रोही, शिवद्रोही

समदास । ते नर करहिं कल्प भरि घोर नरक मह वास ॥ इत्यादि । परन्तु तुलसी जी यह भी कहते हैं- कि भूत प्रेत के पूजक अधम गति को पाते हैं यथा जे परिहरि हरिचरण रति, भजहिं भूत गण घोर । तिनकी गति मोहि देहु विधि जो जननी मति मोर ॥ अतः मैं कहता हूं कि रामायणी सदा भ्रम में पड़े रहेंगे । ७४—पुनः परम उपास्य देव के विषय में भी ये सन्दिग्ध रहेंगे । क्योंकि राम पर ब्रह्म थे, या, विष्णु के अवतार थे ? या नर थे ? अन्य तीनों भाई कौन थे ? सीता यदि माया थी तो राम के साथ न जाकर पृथिवी में ही क्यों समागई ? तुलसी या वाल्मीकि प्रमाण ? वेद या तुलसी जी प्रमाण ? इत्यादि सहस्रों बातें सन्देह युक्त हैं ॥ ७५—सगुण और निर्गुण उपासना करने में भी ये भ्रमयुक्त रहेंगे । क्योंकि तु० कहते हैं कि जो ब्रह्म अज, अनादि, सर्वव्यापक, अगुण, निर्गुण, निराकार, अदृश्य अज्ञेय, ब्रह्माविष्णुशिवादि पूजित है वही भक्तों के हेतु अवतार लेता है, परन्तु अवतार लेना इसकी नटवत् क्रिया है असलीरूप तो वही सर्वव्यापक और निर्गुणादिक है । यथा—व्यापक ब्रह्म अखण्ड अनन्ता । अखिल अमोघ एक भगवन्ता ॥ अगुण अदंभ गिरा गोतीता । निर्गुण निराकार निर्मोहा ॥ यथा अनेकन वेष धरि नृत्य करै नट कोइ । जोइ जोइ भाव दिखावै,

आपु न होई सोइ "अस रघुपति लीला उरगारी" इत्यादि प्रमाणों से सिद्ध है कि अवतारलीला नटवत् है। राम का सच्चा रूप निर्गुण निराकार और अगुण हैं। अब रामप्रेमी असलीरूप या नकली रूप का ध्यान करेंगे। गुण भी किसके गावेंगे। प्रेमियों! विचारिये तो नकली रूप के कितने और असली रुप के कितने गुण हैं। नकली रूप से राम ने केवल सपरिवार रावण को मारा इस रूप से भूमि न रची, सूर्य न बनाया, अनन्त अनगिनती ब्रह्माण्ड न बनाए। परन्तु जिस निर्गुण रूपसे ये सारी लीलायें रची यथार्थ में वही पूज्य ध्येय है। अवतारलीला क्षणिक और निर्गुण लीला शाश्वत है। यह भी तो तुलसीदासजी कहते हैं निर्गुणरूप सुलभ अति सगुण न जाने कोइ। अब आप कहिये किसकी उपासना करेंगे। मालूम होता है कि तुलसीदासजी ने वृद्धावस्था में रामकथा गढी अतः पद २ पर परस्पर विरोध है। ७९—तुमहि निवेदित भोजन करहीं। प्रभु प्रसाद पट भूषण धरहीं॥ इससे मूर्त्तिपूजक रामभक्तों को बड़ी कठिनाई उपस्थित होगी क्योंकि प्रथम तो किसी का जूठा खानाही अनुचित है। दूसरा रामने नटवत् क्षत्रिय देह धारण किया था और इसी देह की स्थापना सर्वत्र मन्दिरों में है। इस अवस्था में क्षत्रिय के जूठ खाने का भी दोष उन पुरुषों को लगेगा जो भोग लगाकर खायेंगे। और भी। पार्श्ववर्ती पार्षद सहित राम को भोग

लगेगा । पार्श्ववर्ती प्रथम कौआ, गीध, गणिका, पापी, अजामिल, निषाद अर्थात चाण्डाल गुह, वानर, भालू, राक्षस आदि २ सब ही है। क्योंकि ये सामीप्यमुक्ति भागी है क्या रामभक्त इन्होंको छोड़ केवल रामको ही भोग लगावेंगे ? और श्री राम के शरीर में कैसे २ महापापी रावण, यवन, म्लेच्छ, चाण्डाल, गणिका आदिक समाए हुए हैं जिनका कुछ ठिकाना नहीं। पुनः इस शरीर को भोग लगाते हुए आपको घृणा न आवेगी ? आपकी जाति पाति भी कैसे रह सकती ? कहां तक मैं लिखूं मूर्त्तिपूजकों के लिये यह एक बड़ी आपत्ति है।

७७—एक और भी आश्चर्य की बात सुनिये भगवान के अवतार ग्रहण करने में सब कोई सन्देह करते आये। ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, सती, पार्वती, नारद, गरुड़, ऋषि, मुनि, आदिक, सब ने सन्देह किया और निर्गुणरूप में किन्ही ब्रह्मादिकों को सन्देह नहीं हुआ। अतः अवतार लेना भी गप्प है। पुनः उस समय निराकार ब्रह्म का ही ऋषि मुनि उपदेश देते थे। इसी कारण हटी भुशुंड को शाप दियागया और अन्त में कौए की थोड़ी बुद्धि जान साकार का ध्यान उसे बतलाया गया। इससे सिद्ध है कि पशुपक्षी प्रभृतियों के लिये साकार ध्यान है नकि मनुष्यों के लिये। पुनः सती ब्रह्मा आदिक तो भाई बन्धु के समान विष्णु के यहां सदा जाते ही रहते थे तब उन्हें सन्देह ही क्यों होता ? इन से भी अवतार कथा मिथ्या सिद्ध होती है।

७८—रामायण के पढ़नेहारे घोर पाप करने से भी कभी न डरेंगे। क्योंकि रावण से और उसके परिवार से बढ़ कर कौन आदमी घोर पापिष्ट और अत्याचारी है वा होगा। परन्तु, ऐसे महा-

पापिष्ठ रावण को भी सपरिवार मुक्ति मिली। ७९ महाघोर अत्याचारी अजामिल को मरण के समय केवल अनजान नारायण नाम कहने से परमधाम मिला। ८०—एक बार भी अज्ञान से भी आलस्य में भी यदि मुख से राम यह पद निकल जाय तो जन्म जन्म के पाप-पुञ्ज भस्म हो जाते हैं और अन्त में साक्षात् वैकुण्ठ को जाता है। ८१—और भी कैसा ही पापिष्ठ अपराधी क्यों न हो, सुग्रीव और विभीषण के समान शरणागत को रामजी क्षमा कर देते हैं। ऐ भारतभूषण जनों सोच कर देखिये इस सिद्धान्त के विश्वासी क्यों कर घोर पाप करने से डरेगा।

शूद्र और तुलसीदास ८२—रामायण पढने हारे वड़े पक्षपाती और अन्यायपरायण होंगे। क्योंकि "पूजिय विप्र शील गुण हीना। शूद्र न गुण गण ज्ञान प्रवीणा॥ राम भक्तों! इसी का नाम न्याय है? यदि एक शूद्र ज्ञानी विज्ञानी, गुणी हो जाय तो उस की पूजा ब्राह्मण के समान क्यों न हो? शील गुण हीन और मूर्ख को क्या विप्र ही कहेंगे। एक स्थल में स्वयं तुलसीदासजी कहते हैं कि श्रोत्रिय विप्र जो वेद विहीना जो शोचनीय है वह पूज्य कैसे? तुलसीदासजी शूद्र को पशुवत् मानते। यथा ढोल गवार शूद्र पशु नारी। ये सब ताडन के अधिकारी। पुनः आगे शूद्र को खूब नीचे गिराया है जैसे-जे वर्णाधम तेलि कुम्हारा। श्वपच किरात कोल कलवारा॥ नारि मुई गृह सम्पति नाशी।

मूंड मुड़ाई भये सन्यासी। ते बिप्रनसन पांव पुजावहिं। उभय लोक निज हाथ नसावहिं॥ शूद्र करहिं, जप तप व्रत नाना। बैठि बरासन कहहिं पुरान॥ शूद्र द्विजहिं उपदेशहिं ज्ञाना। मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना॥ इत्यादि। शूद्रों पर तुलसीदासजी का इतना क्रोध क्यों? शूद्रों के लिये ही तो १८ पुराण १८ उपपुराण और पंचम वेद महाभारत बने हैं। पुराण-कर्त्ता व्यासजी का तो यही सिद्धान्त है। भागवत आदि १८ (अष्टादश) पुराणोंकों सुनानेहारे सूतजी वर्णसंकर क्या नहीये?। और बड़े बड़े ऋषि और मुनि उन से पुराण न सुना करते थे? तब आप इतने क्रुद्ध क्यों। बाल्मीकि और भागवत आदिक भी तो आप देख लेते। बाल्मीकिजी कहते हैं "जनश्च शूद्रोऽपि महत्वमीयात्" रामायण पढ़ने से शूद्र महत्व को प्राप्त होता है श्रीमद्भागवत में व्यास देव कहते हैं कि "शूद्रः शुध्येत पातकात्" यदि शूद्र भागवत पढे तो पातक से छूट जाय। जब संस्कृत रामायण भागवत पढ़ने के ये शूद्र अधिकारी हैं तो भाषा के क्यों नहीं? प्रेमियों! क्या तुलसीदासजी का यह महापक्षपात नहीं? यदि कलियुग में शूद्र जपी, तपी, ज्ञानी, मुनि, विद्वान हों तो महात्मा जनो को संतुष्ट होना उचित है तब ये इतने कोपित क्यों। और भी। तुलसीदासजी पशु पक्षी आदिकों में जाति भेद के समान मनुष्य में जातिभेद मानते है। तेली, कुम्हार, कुरमी, कलवार, किरात, कोल, कायस्थ, करण, अम्बष्ठ, शिल्पी, अर्थात खाती, बरही, तखान; जुलाहा, नाई, धोबी,

चमार, माली, लोहार, सोनार, कसेरा, अहिर, कलाल, मारवाड़ इत्यादि २ व्यवसायी मनुष्यों को तुलसीदासजी शूद्र और इनमें से किन्हीं को वर्णसंकर मानते हैं और इन्हीं के लिये कहते हैं कि ये पशुवत ताडन के अधिकारी हैं और किसी शुभ काम में इनका अधिकार नहीं। आजकल इनही वर्णों के लोग रामायण अधिक पढ़ते हैं परन्तु ये सब तुलसीदास की आज्ञा के विरुद्ध करते हैं ? प्रेमी भक्तो ! इसी कारण मैं वारम्वार कहता हूं कि आप सब वेदों की शरण में आवें। तब ही पक्षपात और अन्याय से बच सकते हैं, वेदों में चारों वर्ण समान माने गए हैं। अपनी २ जगह में चारों ही श्रेष्ठ, मान्य, पूज्य हैं।

८३—इसी प्रकार वाल्मीकि प्रथम घातक थे पश्चात् ऋषियों के उपदेश से मरा २ जप के सिद्ध हुए। ८४—नारदजी ने मोह मे फंसे के विष्णु को साप दिया। ८५—उर्वशी को देख मित्र और वरुण के वीर्य कुछ घट में और कुछ जमीन पर गिरे इन ही से अगस्त्य और वसिष्ठ का जन्म हुआ ये बातें सर्वथा मिथ्या हैं, ये चारों महान् ऋषि हुए हैं। किन्हीं नास्तिकों ने वैदिक ऋषियों को दूषित करने के लिये ऐसी २ मिथ्या कथाएं गढ़ी हैं। तुलसीदासजी ने भी विना विचार के अपने ग्रन्थ में लिखदियें हैं। मित्र वरुण उर्वशी और वसिष्ठ की जो वैदिक कथा है वह किसी मनुष्य से सम्बन्ध नहीं रखती। वैदिक इतिहास निर्णय में देखिये इसी प्रकार ८६—अगस्त्य का समुद्र पान, ८७—ययाति को यौवन की प्राप्ति ८८ नहुष और इन्द्राणी की कथा ८९—राजा वेणु की कथा। ९०—समुद्र का मथन इत्यादि २ सारी कथायें पौराणिकों ने किसी अन्य अभिप्राय से गढ़ी थीं। वे भी इनको सत्य नहीं मानते परन्तु तुलसीदासजी इनको

सत्य मानते हैं यह आश्चर्य की बात है। तुलसीदासजी जो यह कहते हैं कि, ९१–हनुमान् समुद्र कूदकर आकाश मार्ग से लङ्का को चले। ९२–आकाश में ही सुरसा को भी दिव्यरूप दिखला या। ९३–छाया ग्राहिणी को पछाड़ा और मैनाक का भी आदर किया। महाशयो! ये किसी विमान पर जारहे थे कि बीच २ में ठहरते गए? क्या कहाजाय, गप्प का कहीं भी अवसान नहीं। ९४–लङ्कापुरी मनुष्याकार में आकर हनुमान् से बोली और पीछे मारी गई। ९५–लङ्का में राक्षसों की सृष्टि–कोई त्रिमुख, कोई अमुख, त्रिशिरा, कोई बहुशिरा अर्थात् मनुष्य से सब ही विलक्षण थे। ९६ रावण दश शिर और बीस भुज, ९७–इसके उदर में अमृत था। ९८–काटे जाने पर भी पुनः शिर होजाते थे। ९९–एकही रात में हनुमान ने इतने कार्य्य किये। १००–भवनसहित वैद्य सुषेण को ले आये। १०१–इस-की आज्ञा से सञ्जीवनबूटी लाने को चले और रास्ते में काल-नेमि को हनन किया। १०२–भरतजी के बाण से आहत होकर गिरे और उन से वार्त्तालाप कर प्रातःकाल के पहले ही पुनः लङ्का आ पहुंचे। हे रामभक्तजनो! सोचिये तो! इसका रामा-यण नाम न रखकर गप्पायन यदि नाम रक्खा जाय तो अच्छा था। १०३–मृत दशरथ रामजी से मिलने को आये। क्या रामप्रेमियों के श्राद्ध के समय मृतपितर आते हैं या नहीं? १०४–इसी प्रकार सीताजी का जन्म मुनियों के रक्त से मानना मिथ्या ही है। १०५–शिव पार्वती का सम्वाद। १०६–सती का मिथ्याभाषण करना। १०७–मनु शतरूपा का वर मांगना। १०८–वृन्दा का शाप देना आदि कथाएं मिथ्या और वाल्मीकि में भी नहीं हैं।

ख—मैं रामायण के प्रेमियों से और जितने सम्प्रदायी, रामानुजी, रामानन्दी, निम्बार्की, वल्लभाचारी, चैतन्यनुगामी, आचारी तप्तमुद्राधारी, शीतमुद्राधारी, शङ्कराचारी–तीर्थ, आश्रम, वन, अरण्य, गिरि, पर्वत, सागर, सरस्वती, भारती, पुरी और शिवनारायणी, कबीरपंथी, दादूपंथी, नानकपंथी, और जो आजकल के नवीन सम्प्रदायी हैं इसके अतिरिक्त शारदामठाधीश, नाथद्वाराधीश, काशीपुरीनिवासी सनातनी पण्डित महाशय, व्यंकटेश्वर, भारतजीवन, सनातनधर्मपताका आदिक समाचारपत्र सम्पादक इत्यादि २ जो कोई भारतवर्ष में इन कथाओं को सत्य माननेहारे हैं उन सब से मेरा निवेदन है कि इन कथाओं की सत्यता को सिद्ध करें। यदि न कर सकें तो वैदिकधर्म्म को ग्रहण कर इस लोक, और परलोक को सुधारें। संसार भर के मनुष्यों के माननीय पुस्तक वेद हैं। आप भारतवासियों को तो सर्वस्व प्राणस्वरूप ही हैं। तब सब कोई मिलकर क्यों न वैदिक पथावलम्बी बनें।

॥ इति श्री ॥

ग्रन्थकर्त्ता के अन्यान्य ग्रन्थ—

:0:

१—छान्दोग्योपनिषद्भाष्य, संस्कृत और आर्य्य भाषा सहित मूल्य ४)

२—बृहदारण्यकोपनिषद्भाष्य संस्कृत और आर्य्यभाषा सहित मूल्य ३)

द्वितीय संस्करण

३—ओङ्कार निर्णय	..	...	,,	।-)
४—त्रिदेवनिर्णय	...	..	,,	≡)
५—जातिनिर्णय	...	...	,,	१।)
६—श्राद्ध निर्णय	.	..	,,	।।।)
७—वैदिक इतिहासार्थ निर्णय		..	,,	१॥)
८—अलौकिक माला	..	.	,,	≢)
९—कृष्णमीमांसा	..	.	,,	≢)

१०—प्रश्न इसमें रामायण प्रेमियों के प्रति कुछ २ प्रश्न हैं)॥

११—वैदिक रहस्य चार भाग	..	,,	।।।)
१२—ईश्वरीय पुस्तक कौन ?	.	,,	-)॥

पुस्तक मिलने का पता—

प्रबन्धकर्त्ता, शङ्कर पुस्तक भण्डार

पो० ऑ० कमतौल

जिला दरभङ्गा